International Journal of Sanskrit Research 2022; 8(2): 214-218

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2022; 8(2): 214-218
© 2022 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 30-10-2021
Accepted: 06-01-2022

अतुल कुमार शुक्ला
शोध-छात्र, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
अतुल कुमार शुक्ला
शोध-छात्र, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

राज्य की आय के स्रोत

अतुल कुमार शुक्ला

प्रस्तावना

अर्थशास्त्र में राज्य की सात प्रकृतियों के रूप में राजा, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोष, सेना एवं मित्र का उल्लेख है [1]। इनमें से कोष के विषय में कौटिल्य लिखते हैं कि सारे कार्य कोष पर ही निर्भर करते हैं [2]। उनके मतानुसार कोष से सेना और सेना से राज्य की रक्षा व वृद्धि की जा सकती है। अतः राजा को राजकीय आय वृद्धि के लिए निरन्तर प्रयासरत रहना चाहिए [3]। उन्होंने राज्य की आय के प्रमुख स्रोत के रूप में दुर्ग, राष्ट्र, खान, सेतु, वन, व्रज, वणिक्पथ, आयकर एवं न्यायालयों से आय आदि का उल्लेख किया है। कर संग्रह का कार्य समाहर्ता नामक अधिकारी करता था [4]।

दुर्ग: कौटिल्य ने नगर से प्राप्त होने वाली आय को दुर्ग की श्रेणी में रखा है। नगरों को चारों ओर से प्रवेश करने वाले मार्गों पर स्थित चुंगी से अच्छी आय प्राप्त होती थी। कौटिल्य मानते थे कि वस्तु जिस स्थान पर उत्पन्न हुई हो उसे वहीं नहीं बेचना चाहिए। इसलिए उन्होंने उत्पत्तिस्थल पर वस्तु की बिक्री को प्रतिबन्धित कर दिया था [5]। इस नियम का उल्लंघन करने वालों के लिए आर्थिक दण्ड का प्रावधान किया गया। खानों से तैयार किया हुआ कच्चा माल खरीदने, बेचने वालों को छः सौ पण दण्ड दिया जाता था। फल-फूल के बगीचों से ही फल-फूल खरीदने बेचने वालों पर चौवन पण, खेतों से ही कन्द-मूल व शाक-सब्जी खरीदने पर पौने तिरपन पण और खेतों से सीधे अनाज खरीदने वालों से तिरपन पण दण्ड वसूला जाता था [6]। ऐसी कठोरता का परिमाण यह था कि कोई वस्तु कर से बच नहीं पाती थी और राज्य की आय में वृद्धि होती थी। पूरे राज्य में चुंगीघर थे, जहाँ चार पाँच कर्मचारी तैनात रहते थे। इस विभाग का अध्यक्ष शुल्काध्यक्ष कहलाता था। [7] इस विभाग द्वारा व्यापारियों के आने जाने वाले माल की सघनता से जाँच की जाती थी। किसी भी प्रकार कमी मिलने पर व्यापारी से निर्धारित शुल्क का आठ गुना दण्ड वसूला जाता था [8]। जो व्यापारी नाप कर वस्तु बेचते थे उनसे सवा छः प्रतिशत, तोलकर बेचने वालों से पाँच प्रतिशत और गिनकर बेचने वालो से नौ प्रतिशत से कुछ अधिक कर के रूप में वसूला जाता था। शेष वस्तुओं में कर सामान्यतया लागत का पाँचवाँ हिस्सा होता था [9]। लेकिन फल, फूल, साग, गाजर, मूल, शकरकन्द, धान्य, सूखी मछली और मांस पर लागत का छठा हिस्सा कर के रूप में लिया जाता था [10]।

मोटे महीन रेशमी कपड़ों, सूती कवच, लोहा, गेरू, चन्दन, मादक शराब, हाथीदांत, मृगचर्म, रेशमी धागे, बिछौना, ओढना अन्य रेशमी वस्त्र और भेड बकरी की ऊन के बने वस्त्रों आदि पर उनके मूल्य का पन्द्रहवाँ हिस्सा प्रवेष्य कर के रूप में लिया जाता था [11]। सूती कपड़ों, सूत, कपास ढुलाई, लकड़ी, बांस छाल मिट्टी के बर्तन, अनाज, घी, तेल, खारा नमक, शराब और पके हुए अनाज का बीसवाँ या पच्चीसवाँ भाग कर के रूप में लिया जाता था [12]।

कोयला और नमक आदि कम मूल्य वाली वस्तुओं का चुंगीकर बिना वजन किये अनुमान से ही लिया जाता था [13]। जो व्यापारी चुंगी बचाने के लिए बढ़िया सामान को घटिया बताकर निकालने का प्रयास करता था, उसे एक हजार पण तक का दण्ड दिया जाता था। प्रतिबन्धित वस्तुओं को जब्त करके इतना ही जुर्माना वसूलने का नियम था। विवाह संबंधी, विवाह में प्राप्त, दान, देवपूजा, मुंडन, जनेऊ, गोदान और व्रत आदि धार्मिक कार्यों से सम्बन्धित सामग्री पर कर नहीं लिया जाता था। [14]

कौटिल्य के मतानुसार यदि आयातित सामान कठिनता से प्राप्त होता हो तो प्रजाहित के लिए उस पर बिक्री कर नहीं लगाया जाता था ताकि प्रजा को वह सामान सस्ती दरों पर ही प्राप्त हो सके [15]। इसके अतिरिक्त नगर प्रमुख द्वारा दण्ड स्वरूप वसूला गया जुर्माना [16] एवं दूसरे अधिकरण में उल्लिखित नगर स्थित विभिन्न विभागों के विभागाध्यक्षों यथा लक्षणाध्यक्ष, मुद्राध्यक्ष, सुराध्यक्ष, सूनाध्यक्ष, सत्राध्यक्ष, सुवर्णाध्यक्ष, देवताध्यक्ष, पण्याध्यक्ष, आकराध्यक्ष, पोतवाध्यक्ष, गणिकाध्यक्ष, गोअध्यक्ष, अश्वाध्यक्ष एवं हस्त्यध्यक्ष आदि से प्राप्त आय भी दुर्ग कहलाती थी। इस कर से राज्य को अत्यधिक आय प्राप्त होती थी।

राष्ट्र: नगरों के अतिरिक्त देहात व अन्य से प्राप्त आय को राष्ट्र कहते थे [17]। इसमें सीता (राजकीय भूमि वाली आय) एवं निजी खेती की आय का छठा भाग राजकोष में जमा किया जाता था [18]। जो किसान स्वयं के सामर्थ्य से तालाब आदि बनाकर सिंचाई करता था, उसे पाँच वर्ष तक भूमि कर में छूट रहती थी [19]। इसके बाद उससे उपज का पाँचवा हिस्सा भूमि कर के रूप में लिया जाता था [20]।' जो किसान कन्धों पर जल लाकर सींचा करता था उससे उपज का चौथाई भाग तथा जो किसान, नालियाँ बनाकर खेतों को सींचता था उससे उपज का तीसरा भाग कर के रूप में वसूला जाता था। जो किसान नदी, झील या कुओं पर रहट लगाकर खेत की सिंचाई करता था उससे उपज का चौथा भाग भूमि कर के रूप में लिया जाता था [21]। इसके अतिरिक्त बलि (तीर्थ स्थान आदि धार्मिक स्थलों पर लगाया जाने वाला कर), वणिक कर, नदियों एवं उनके पुलों के पार जाने वालों से प्राप्त होने वाला कर, कस्बों से प्राप्त कर, चरागाह कर और अपराधियों से जब्त धन आदि इस श्रेणी में आय के प्रमुख साधन थे [22]।

खनि : कौटिल्य ने खानों को राजकीय नियन्त्रण में रखा था। इनमें सोना, चाँदी, हीरा, मणि मोती, शंख, लोहा, लवण पत्थर एवं खनिज पदार्थों आदि खानों से राज्य को काफी आय प्राप्त होती थी [23]।

सेतु : फूल, फल, अन्न, कन्द एवं मूल आदि से प्राप्त आय सेतु कहलाती थी [24]। इस श्रेणी में छठा भाग राजकर के रूप में लिया जाता था [25]।

वन: जंगल राजकीय नियन्त्रण में रहते थे। जंगल से किसी भी प्रकार की होने वाली आय राज्य की होती थी [26]। वन उत्पादों का छठा हिस्सा राजकर के रूप में लिया जाता था [27]। जिसमें जूट, छाल, कपास, ऊन, रेशम, गंध, पुष्प, फल शाक, औषधि, लकड़ी, बांस एवं सूखा माँस आदि द्रव्य मुख्य रूप से रहते थे।

व्रज: राजकीय पशुघरों में रहने वाले पशुओं गाय, भैंस, भेड़, बकरी, गधा, घोडा, खच्चर आदि से होने वाली आय व्रज कहलाती थी [28]। इन पशु मालिकों से राज्य पशु की आय का दसवाँ हिस्सा कर के रूप में वसूलता था [29]।

वणिक्पथ: व्यापार के दो मार्ग थे। इन दोनों जल एवं स्थल मार्गों से राज्य को होने वाली आय वणिक्पथ कहलाती थी [30]।

मार्गरक्षा कर : प्राचीन काल में रास्ते असुरक्षित थे। समाज को कंटकों का भी भय रहता था। अत: कौटिल्य ने मार्गों की सुरक्षा का प्रबन्ध करते हुए सीमारक्षक अन्तपाल के माध्यम से मार्गरक्षा कर (वर्तनी) अर्थात टोल टैक्स वसूलने का उल्लेख किया है। तय दरों के अनुसार घोड़े-खच्चर, गधे आदि जानवरों की गाड़ी पर एक पण, बैल आदि की गाड़ी पर आधा पण बकरी भेड आदि का आधा पण एवं कन्धे पर भार ढोने वाले व्यक्तियों से एक माषक वसूला जाता था। अन्तपाल पर इनके जान माल की सुरक्षा का दायित्व रहता था। यदि व्यापारी के माल में राज्य को नुकसान पहुंचाने वाले विष आदि वस्तुएँ पाई जाती थीं तो उन्हें अन्तपाल के कर्मचारी नष्ट कर देते थे। अन्तपाल प्रत्येक व्यापारी का

माल सघनता से जाँच कर मार्गरक्षा कर प्राप्त करके एक मोहर लगी पावती (टोकन) देकर शुल्काध्यक्ष के पास भेज देता था [31]।

जल यातायात : जल यातायात से भी राज्य को पर्याप्त आय होती थी। जलीय यातायात एवं बन्दरगाहों का प्रधान अधिकारी नौकाध्यक्ष विभिन्न जलीय मार्गो, तटों एवं बन्दरगाहों की व्यवस्था देखने और कर वसूली का कार्य करता था। कौटिल्य लिखते हैं कि नौकाध्यक्ष तटवर्ती लोगों से नियमित कर वसूले क्योंकि उन्हें स्थान विशेष में रहने के कारण अनेक सुविधाएँ मिलती हैं। इसके अतिरिक्त मछुआरों से उनकी आय का छठा भाग, राजकीय नौकाओं के यात्रियों, बन्दरगाह पर वणिकों, विदेशी जहाजों, नियम का उल्लघन करने वालों से जुर्माना एवं समुद्र से शंख, मुक्ता आदि निकालने के लिए राजकीय नौकाओं का प्रयोग करने वालों से भी शुल्क वसूला जाए [32]।

आयकर: अर्थशास्त्र में वेश्याओं से मासिक आय के आधार पर उनके दो दिन की आय को कर के रूप में वसूलने का उल्लेख है। इस आधार पर अनुमान लगाया जा सकता है कि सभी राजकर्मचारियों एवं अन्य पेशेवरों से उनकी मासिक आय के आधार पर महीने के दो दिन की आय को कर के रूप में वसूला जाता होगा। बाहर से आई हुई नाटक मंडली से पाँच पण प्रति शो (तमाशा) आयकर के रूप में लिए जाते थे [33]। इसी तरह गायकों, वादकों, नट नर्तकों, तमाशा दिखाने वाली एवं अन्य से भी राज कर वसूला जाता था।

न्यायालयों से आय: अर्थशास्त्र में सभी वर्गों, आश्रमों, किसानों, मजदूरों, कर्मचारियों, अमात्यों, व्यापारियों, राजकुमारों, रानियों एवं राजा आदि सहित सभी स्त्री पुरुषों के लिए एक संविधान है, जिसका उल्लंघन करने वालों को कठोर दण्ड दिया जाता था। कौटिल्य ने तीसरे एवं चौथे अधिकरण में अपराधों के अनुरूप जुर्माना राशि की सम्पूर्ण जानकारी दी है। इसमें आर्थिक दण्ड के रूप में वसूली से राज्य को अत्यधिक आय होती थी। अर्थशास्त्र में जुर्माना राशि में अष्टभागपण से लेकर बहत्तर हजार पण [34] तक के अर्थदण्ड का भी उल्लेख है।

राजकीय व्यय-

कौटिल्य के राज्य की आय अत्यधिक थी तो व्यय भी कम नहीं थे। राजा का स्वयं उसके परिवार एवं राजमहल का खर्चा बहुत अधिक था। राजमहल, बहुत ही विशाल परिसर में बनते थे जहाँ प्रत्येक प्रकार की सुख सुविधाएँ, बाग बगीचे, सरोवर एवं सुरक्षा रहती थी। राजपरिवार के प्रमुख सदस्यों राजमाता एवं युवराज को राजकोष से अड़तालीस हजार पण प्रति वर्ष तथा राजा के अन्य पुत्रों एवं उनकी माताओं को बारह हजार पण तक प्रति वर्ष वेतन भी दिया जाता था। राजमहल में हजारों लोग रहते थे, जिनका भोजन वही बनता था। कौटिल्य का राजा अत्यन्त उदार एवं दानवीर था, जो अनाथों विपत्तिग्रस्त लोगों, बालक, वृद्ध, रुग्ण साधू सन्तों, ब्राह्मणों एवं अन्य बहुतों को नित्य दान देता था। राज्य की ओर से अकाल आदि के समय किसानों को पर्याप्त सहायता दी जाती थी। दैवीय आपदाओं के समय भी प्रजा के नुकसान की क्षतिपूर्ति एवं अतिरिक्त धन दिया जाता था [35]। अर्थशास्त्र में विभिन्न राजकर्मचारियों के उच्च वेतनमान दिये है जिस पर राज्य की आय का चौथा भाग व्यय हो जाता था। मृत कर्मचारी के स्त्री- बच्चों एवं परिवारजनों को भी वेतन एवं अन्य सहायता मिलती रहती थी। सेना के अस्त्र-शस्त्र, हाथी-घोड़े, रथ, खच्चर एवं सैनिकों पर भी राज्य की आय का एक बहुत बड़ा भाग खर्च होता था। कौटिल्य अशिक्षा को बुराई मानते थे [36]।" अत: राज्य की ओर से शिक्षा पर भी व्यय किया जाता था एवं गुरूकुलों को राज्य सहायता देता था। आमोद-प्रमोद खेल तमाशों एवं अन्य उत्सवों के आयोजन में राज्य का व्यय होता था। राजा प्रजाहितैषी था, अत: राज्य की ओर से पूरे वर्ष प्रजाहित के विभिन्न कार्य निरन्तर चलते रहते थे, जिसमें विभिन्न धार्मिक कार्य, दान, रास्तों की सुरक्षा, चोरों, हिंसक जानवरों से रक्षा आदि सहित सिंचाई के लिए पानी की व्यवस्था प्रमुख थी [37]।

आपातकाल में कोष संचय-

कौटिल्य लिखते हैं कि राज्य में यदि अकस्मात् ही अर्थसंकट उपस्थित हो जाए तो राजा को धन संग्रह के लिए अतिरिक्त उपाय करने चाहिए। इस प्रक्रिया में ध्यान रखा जाता था कि ईमानदार प्रजा को कष्ट न पहुँचे। सामान्यतया किसानों से अन्न आदि की उपज का छठा भाग राजकर के रूप में लिया जाता था किन्तु विशेष परिस्थितियों में किसानों की सहमति से राजकर चौथा या तीसरा भाग भी हो सकता था। सोना, चाँदी, हीरा मणि मोती, मूँगा, घोड़े हाथी, हाथी दाँत और चमड़ा आदि वस्तुओं पर उनकी कीमत का पचास प्रतिशत कर के रूप में लिया जाता था। इसी प्रकार सूत, कपड़ा, ताँबा, पीतल, कांसा, गन्ध, जड़ी बूटी, शराब पर चालीस प्रतिशत राजकर तथा अन्न घी, तेल, लोहा और बैलगाड़ियों पर तीस प्रतिशत राजकर वसूला जाता था। बड़े कारीगरों और काँच के व्यापारियों से बीस प्रतिशत तथा छोटे कारीगरों और कुलटा स्त्रियों को घर में रखने वालों से

दस प्रतिशत कर लिया जाता था। साधारण लकड़ी, बांस, पत्थर, मिट्टी के बर्तन आदि पर भी पाँच प्रतिशत कर लगा दिया जाता था। सामान्य स्थिति में नट नर्तक, गायक तथा वेश्याएँ जिनसे उनकी मासिक आय के आधार पर मात्र दो दिन की आय ही कर के रूप में ली जाती थी। वही धन की आवश्यकता पड़ने पर राज्य उनकी आय का आधा हिस्सा भी वसूल सकता था। इसी प्रकार मुर्गे और सूअर पालने वालों से उनकी आय का आधा हिस्सा गाय, भैंस, खच्चर, गधा और ऊँट पालने वालों से दसवां हिस्सा तथा भेड़-बकरी पालने वालों से राज्य द्वारा छठा हिस्सा वसूला जाता था [38]।

कौटिल्य की मान्यता है कि यदि उक्त उपायों के बाद भी राजकोष की स्थिति न सुधरे तो कर दाताओं को दूसरी बार कर अदायगी के लिए बाध्य नहीं किया जाना चाहिए। इसके बाद समाहर्ता, प्रजा से राज्यहित के लिए धन की याचना कर सकता था। धनी व्यक्तियों से राजकोष में चंदा देने के लिए आग्रह किया जाता था, ऐसा करने वालों को राज्य सम्मानित करता था [39]। इससे दूसरे धनिकों को भी प्रोत्साहन मिलता था। सामर्थ्य के बावजूद भी चन्दा न देने वाले धनिकों की गुप्तचरों के माध्यम से समाज में निंदा फैलाई जाती थी। कौटिल्य के मतानुसार ऐसे मन्दिरों की सम्पत्ति जिसका कोई भी अंश श्रोत्रिय के पास नहीं जाता हो, पाखण्डी समूहों की सम्पत्ति एवं उत्तराधिकारी विहीन मृतक की सम्पत्ति को राज्य द्वारा अपने अधिकार में ले लेना चाहिए। कौटिल्य ने आपातकाल में राज्यहित के लिए धन संग्रह के उपायों में ढोंग एवं पाखण्ड को भी उपयुक्त माना है। उनके अनुसार देवताध्यक्ष, गुप्तचरों के माध्यम से किसी पवित्र स्थान पर भूमि में से देवता प्रकट हुए हैं ऐसी अफवाह फैलाकर एक वेदी बनाएँ। यहाँ मेला लगाकर दर्शनार्थियों और भक्तों से खूब भेट चढ़वाकर प्राप्त धन राजकोष में जमा करें। आचार्य ने और भी अनेक उपाय बताए है जैसे किसी मन्दिर के पेड़ पर बिना मौसम फूल या फलदर्शना एवं किसी सुरंग वाले कुएँ से तीन या पाँच सिर वाला नाग दिखाना तथा इन्हें चमत्कार बताकर लोगों से धन प्राप्त करके राजकोष में जमा करना। इसी प्रकार के एक उपाय में किसी मन्दिर में अचानक सर्प दिखाकर उसे मन्त्र या औषधि से वश करके लोगों के सम्मुख देवमहिमा के रूप में प्रस्तुत किया जाता था। किसी गुप्तचर के माध्यम से इस कार्य को चमत्कार मानने से इन्कार भी करवाया जाता और फिर उस नास्तिक के चरणामृत में बेहोशी की दुवा मिलाकर पिला दी जाती थी। बेहोश होने पर इसे श्राप के रूप में प्रचारित किया जाता था। बाद में औषधि से उसका विष उतार देते थे। इस प्रकार दर्शनार्थियों से प्राप्त भेट को राजकोष में जमा कर दिया जाता था। कभी कभी किसी गुप्तचर को राक्षस के भेष में पेड़ पर बैठाकर चिल्लाते हुए कहलवाया जाता था कि प्रतिदिन खाने को एक मनुष्य चाहिए। इसका प्रतिकार करने के लिए एक और गुप्तचर लोगों से धन संग्रह करके राजकोष में जमा करवा देता था [40]।"

कौटिल्य लिखते हैं कि व्यापारी के वेष में गुप्तचर अनेक सहायकों के साथ समाज के बीच में अपनी साख बनाने के बाद लोगों से अमानत के रूप में काफी पूँजी जमा करके अचानक चोरी होना प्रचारित कर सारा माल हड़प कर राजस्व में जमा करा देवें। इसी प्रकार का एक प्रतिष्ठित व्यापारी लेन देन में खूब प्रसिद्धि पाने के बाद एक सहभोज के बहाने से धनिकों से सोने-चाँदी के बर्तन इकट्ठा करके रात को चोरी करा देवे और राजकोष को भरने का प्रयत्न करें। इसके अतिरिक्त कौटिल्य ने गुप्तचर स्त्रियों के माध्यम से बागी आचरण के धनी पुरुषों का धनु हड़पने को प्रेरित किया है। उनके मतानुसार गुप्तचर स्त्रियाँ ऐसे पुरुषों को अपने घर में बुलाकर उन्हें कैद करा देवे और सरकारी अधिकारी द्वारा उनकी समस्त सम्पत्ति राजकोष में जमा कर ली जाए। आचार्य लिखते हैं कि दो राजद्रोहियों के झगड़े में गुप्तचर एक को विष देकर मार डाले और दूसरे से हत्या के अपराध में राजकोष के लिए धन ऐंठ लिया जाए इसी प्रकार यदि किसी राजद्रोही का किसी प्रजाजन से झगड़ा हो जाए तो रात्रि में गुप्तचर उस प्रजाजन को मार डाले और दोष राजद्रोही पर लगाकर उसकी समस्त सम्पत्ति राजकोष में जमा कर देनी चाहिए।

एक अन्य उपाय में किसी राजद्रोही के यहाँ नौकर के रूप में रहने वाला गुप्तचर उससे प्राप्त वेतन में एक नकली सिक्का मिलाकर राजकर्मचारियों को सूचित कर दे अथवा किसी राजद्रोही का गुप्तचर नौकर उसके घर पर नकली सिक्के बनाने के उपकरण एवं अन्य सामग्री छुपा देवे और अधिकारियों को बुलाकर उसकी सारी सम्पत्ति राजकोष में जमा कर ली जाए। किसी दुष्ट पुरुष के घर में उनका गुप्तचर नौकर राज्याभिषेक सामग्री और शत्रु राजा के जाली पत्र छुपाकर राजा को सूचित कर देवे और उसकी समस्त सम्पत्ति छीन ली जाए। आर्थिक संकट को दूर करने के ऐसे अनेक उपाय अर्थशास्त्र में उल्लिखित हैं परन्तु धन हड़पने में केवल दुर्जन लोगों को ही शिकार बनाया जाता था। कौटिल्य का स्पष्ट मत है कि

> पक्वं पक्वमिवारामात्फलं राज्यादवाप्नुयात्।
> आमच्छेदभयादामं वर्जयेत्कोपकारकम् [41]।।

अर्थात, सज्जन पुरुषों का धन उसी प्रकार छोड़ दिया जाए जैसे वाटिका में कच्चे फल छोड़ दिए जाते हैं और दुष्टों का धन उसी प्रकार ले लेना चाहिए जैसे पके हुए फल तोड़ लिए

जाते हैं। धर्मात्मा पुरुषों से वसूला धन, प्रजा के कोप का कारण बन जाता है।

सारांश में अर्थशास्त्र में अर्थ की महत्ता को प्रमुखता से प्रतिष्ठित किया गया है। यह सत्य भी है क्योंकि धन के अभाव में सामान्य व्यक्ति ही अपने कर्त्तव्य पालन में असमर्थ रहता है तो राज्य का संचालन भला कैसे सम्भव हो सकता है। इसीलिए अर्थशास्त्र के छठे अधिकरण के प्रथम अध्याय में राज्य की सात प्रकृतियों में कोष भी सम्मिलित किया गया है। कौटिल्य का स्पष्ट मत है कि राज्य के समस्त कार्य कोष पर निर्भर रहते हैं। वे निरन्तर कोष समृद्धि पर् बल देते हैं इसलिए उन्होंने आर्थिक विषयों को राज्य के नियन्त्रण में रखा है। कौटिल्य के राज्य में कृषि पशुपालन, कुटीर उद्योग और व्यापार आदि सभी क्षेत्रों को राज्य से पूरी सहायता प्राप्त होती थी। कृषि क्षेत्र में विस्तार पशु-कल्याण कुटीर उद्योगों का नियमन और खुला व्यापार आदि राज्य की प्रमुख आर्थिक नीति थी। खनिज आदि कुछ महत्वपूर्ण उद्योगों पर राज्य का एकाधिकार था। मुद्रा, कर प्रणाली एवं माप-तोल- नाप के मानकों की एकरूपता से राज्य में एक श्रेष्ठ आर्थिक वातावरण था। अर्थशास्त्र में प्रस्तुत राज्य में वस्तुओं के उत्पादन से लेकर बिक्री तक उत्पादक और उपभोक्ता दोनों का ध्यान रखा जाता था, जिसमें प्रजाहित सर्वोपरि था।

संदर्भ सूची

1. गैरोला, वाचस्पति : अर्थशास्त्र 6/1
2. वही 2/8
3. वही 2/12
4. वही 2/6
5. वही 2/22
6. शामशास्त्री आर : 2/22/11-12
7. वही 2/22/1
8. गैरोला वाचस्पति अर्थशास्त्र, 2/21
9. वही 2/22
10. शास्त्री उदयवीर : अर्थशास्त्र, 2/22/4
11. वही 2/22/6
12. वही 6/22/7
13. वही 2/22/7
14. शामशास्त्री आर. अर्थशास्त्र 2/21/17
15. वही 2/21/14
16. वही 2/21/24
17. गैरोला वाचस्पति: अर्थशास्त्र 2/36
18. वही 2/6
19. शास्त्री उदयवीर : अर्थशास्त्र 3/9/37
20. गैरोला वाचस्पति: अर्थशास्त्र 2/24
21. शामशास्त्री आर.: अर्थशास्त्र 2/24/26
22. गैरोला वाचस्पति : अर्थशास्त्र 2/6/ 20
23. शामशास्त्री आर. : 2/6/ 4
24. वही 2/6/5
25. रंगराजन एल. एन. : अर्थशास्त्र पृष्ठ संख्या 232
26. गैरोला वाचस्पति : अर्थशास्त्र 2/6
27. वही 5/2
28. शास्त्री उदयवीर : अर्थशास्त्र 2/6/7
29. गैरोला वाचस्पति : अर्थशास्त्र 2/29
30. शास्त्री उदयवीर : अर्थशास्त्र 2/21/21
31. वही 2/21/21
32. गैरोला वाचस्पति : अर्थशास्त्र 2/28
33. शास्त्री उदयवीर : अर्थशास्त्र 2/27/40
34. गैरोला वाचस्पति : अर्थशास्त्र 4/3
35. वही 4/3
36. वही 8/3
37. गैरोला वाचस्पति : अर्थशास्त्र 2/1 एवं पाण्डेय श्यामलाल : भारतीय राजशास्त्र प्रणेता प्रष्ठ संख्या 139
38. शास्त्री उदयवीर अर्थशास्त्र 5/2/31-33
39. शास्त्री उदयवीर अर्थशास्त्र 5/2/42
40. शामशास्त्री : अर्थशास्त्र 5/2/18
41. शास्त्री उदयवीर : अर्थशास्त्र 5/2/82